चतुर्थ अध्याय

'बस्स ! बहुत हो चुका' काव्यसंग्रह का भाषासौंदर्य

चतुर्थ अध्याय: 'बस्स ! बहुत हो चुका' काव्यसंग्रह का भाषासौंदर्य

प्रस्तावना -

दलित साहित्य आधुनिक काल की देन है किंतु इसके सूत्र आदिकालीन साहित्य से देखने मिलते हैं। आधुनिक काल में यह एक आंदोलन के रुप में उभरकर सामने आया। जिसमें 'दलित' शब्द का व्यापक अर्थ ग्रहण किया गया। दलित उसे कहा गया जो सर्वहारा है, जो पिछड़ा शोषित पीड़ित व कुचला गया है, दबाया गया है। सामान्यत: दलितों के द्वारा दलितों की समस्याओं को लेकर लिखे गये साहित्य को दलित साहित्य कहा जाता है।

दलित साहित्य की भाषा सर्वग्राही भाषा है। दलित साहित्य ने परंपरागत साहित्यिक भाषा, संस्कृतनिष्ठ, काव्यशैली, प्रस्तुतीकरण को नकार सर्वग्राही भाषा का प्रयोग किया है, उसके संस्कार भिन्न हैं। दलित साहित्य में जो बिम्ब, प्रतीक और भाषा का संस्कार है वह दलितों की पीड़ा अपमान, व्यथा आदि का सही सही और यथार्थ हैं। दलित साहित्य जैसा देखा गया वैसा लिखा है और जैसा भोगा है वैसा व्यक्त किया है।

हिंदी साहित्य के आलोचक दलित साहित्य पर कई प्रकार से आरोप लगाते है। विशेषत: यह आरोप भाषा और शिल्प को लेकर, गुणवत्ता को लेकर लगाया जाता है। कुछ इसी तरह की आलोचना करते हुए मुद्राराक्षस लिखते हैं ''अक्सर यह प्रश्न भी उठता है कि दलित रचनाएँ गुणवत्ता की दृष्टि से कमजोर हैं। आखिर यह गुणवत्ता है क्या! और हमेशा उस गुणवत्ता का धार्मिक निष्ठा के साथ पालन किया गया है ? अनिवार्य तत्व था पर आधुनिक कविता ने इसे छोड दिया। जिस अलंकार निर्भरता ने रीति साहित्य की गुणवत्ता के मानव स्थापित किये थे, अलंकार धार्मिता को वर्तमान साहित्य में कहाँ देखा जाएगा ? इस सदी के शुरु में खडीबोली को कविता के लिए घोर अनुप्युक्त माना जाता था; पर आज कविता खडीबोली में लिखी जाती है। कोई भी नया कथ्य अपने पूर्व की विचार परंपरा से विद्रोह करता है। उतनी सीमा तक परंपरा के सौंदर्यबोध संबधी मूल्यों को भी तोडती है वह अपनी भाषा अलंकार शास्त्र और अपना छंद तंत्र बनाता है। कबीर ने यही किया था। उन्होंने संस्कृत का प्रयोग भी नहीं किया था और तत्कालीन सवर्ण कथ्य की अवधी और ब्रज को भी स्वीकार नहीं किया था। उन्होंने जिस भाषा का अविष्कार किया था वह देश के बहुसंख्याक गैर साहित्यिक समाज के बोध की भाषा थी। इसीलिए

मात्रिक छंदो का स्वरुप भी उनका अपना था।'' [1] इस प्रकार आरोंपो का खंडन किया गया है।

दलित साहित्य की भाषा, बिम्ब, प्रतीक भावबोध परम्परावादी साहित्य से भिन्न हैं। दलित साहित्य में जो बिम्ब, प्रतीक भाषा है वह विद्रोहवादी एवं यथार्थवादी है। दलित साहित्य ने भाषासौंदर्य की विवेचना में सौंदर्य, कल्पना, बिम्ब और प्रतीक को प्रमुख माना है। कोई भी साहित्य तभी प्रासंगिक होता है जब उस साहित्य का सम्बन्ध वर्तमान परिप्रेक्ष्य में खरा सिध्द होता है। भक्तिकाल के कवि कबीरदास आज भी हमें प्रासंगिक लगते हैं क्योंकि उनके समय की सामाजिक परिस्थितियाँ आज भी वैसे ही प्रतीत होती हैं। उनके समय की सामाजिक स्थितियाँ ही हैं जो कबीर को आज के युग में प्रासंगिक बनाती हैं।

दलित लेखकों में मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, ओमप्रकाश वाल्मीकि आदि लेखक दलित साहित्य के सौंदर्यशास्त्र के प्रतिमानों से अलग हैं। इनके इस विचार पर हिंदी के स्थापित समीक्षक हमेशा उँगली उठाते रहे हैं। हिंदी के आलोचक नामवरसिंह या परमानंद श्रीवास्तव हिंदी दलित साहित्य के लिए अलग सौंदर्यशास्त्र की आवश्यकता को गलत मानते हैं।

परंपरावादी सौंदर्यशास्त्र भारतीय काव्यशास्त्र के आचार्य पंडित जगन्नाथ के 'वाक्यरसात्मक काव्य' को ही बार-बार दोहरता है। परंतु दलित साहित्यकारों की दृष्टि में दलित साहित्य विद्रोह और नकार में संघर्ष उपजा साहित्य है। सादियों से प्रताडित, शोषित, दलित समाज को हाशिए पर रखा गया है। हाशिए पर रखे गए इस समाज की पीडा, वेदना जब शब्द बनकर सामने आती है तो सामाजिकता की पराकाष्टा होती है। सदियों से दबा यह आक्रोश शब्द की आग बनता है। तब भाषा और कला उसे सीमाबध्द करने में असमर्थ होती जाती हैं।

दलित साहित्यकारों ने साहित्य में वही चित्रित किया है जो यथार्थ है। इन्होंने जैसा देखा है वैसे ही लिखा और जैसा भोगा है वैसे ही चित्रित किया है। दलित रचनाकार लुकछिपकर या घुमा-फिराकर बात नहीं करते वे सीधे यथार्थ की भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके लिए कल्पना के मानंदड त्याज्य हैं। दलित रचनाकार दलितों के अंतसंबधों और परिवेश की वस्तुपरक व्याख्या नहीं करते बल्कि उसमें सहजता और स्वाभविकता लाते हैं।

दलित कविता प्रतिशोध और आक्रोश ही आग उलगती है। दलित कविता की भाषा में आक्रमकता

---

1. रमेश कुमार, 'बस्स ! बहुत हो चुका' संवेदना एवं शिल्प का अध्ययन (दिल्ली, गौतम बुक सेन्टर: प्रथम संस्करण 2007), पृ. 88

एवं मानसिकता को बदलने की ताकत है। इसमें अविश्वसनीय, काल्पनिकता, प्रतीक, बिम्ब और मिथक कोई मायने नहीं रखते। दलित साहित्य नए परिवर्तन का आकांक्षी साहित्य है। ओमप्रकाश वाल्मीकि कहते हैं - ''दलित साहित्य की भाषा नकार और विरोध की भाषा है जिसमें युगों की यातनाएँ साकार हो उठी हैं''[1] दलित साहित्य का शब्दसौंदर्य प्रहार में है। वह शतब्दियों से चली आ रही सडी-गली परंपराओं पर बेदर्दी से चोट करता है। वह दलितों में चेतना जगाता है, शोषण से मुक्ति का मार्ग दिखाता है और समाज व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करने के लिए प्रेरित करता है और इसके लिए जो शाब्दिक प्रहार की आवश्यकता है वह दलित साहित्य में है और यही दलित साहित्य का शिल्प सौंदर्य है।

ओमप्रकाश वाल्मीकिजी के काव्यसंग्रह 'बस्स! बहुत हो चुका' के अध्ययन की पूर्णता के लिए उसके भाषासौंदर्य का अध्ययन हम निम्नलिखित रुप से करेंगे -

1. काव्यभाषा
2. काव्य-प्रतीक
3. काव्यबिम्ब
4. मिथक
5. शब्दशक्ति

4.1. काव्यभाषा -

गद्य और कविता की भाषा में अंतर होता है। जिस तरह गदय में भाव और विचारों को संप्रेषित किया जाता है उसी तरह कविता में नहीं किया जाता। कविता को समझने के लिए अपेक्षाकृत अधिक सहृदय होना आवश्यक होता है यही कारण है कि कविता में शब्दों पर विशेष बल दिया जाता है। ओमप्रकाश वाल्मीकिजी काव्यसंग्रह 'बस्स! बहुत हो चुका' में सहज, सरल और बोलचाल की भाषा का प्रयोग हुआ है। ऐसी भाषा जिसमें दलितों की पीडा, वेदना, व्यथा को यथार्थ रुप से अभिव्यक्त किया गया है। उनकी भाषा नकार और विरोध की है जिसमें अनेक युगों की यातनाएँ हैं। मोहनदास नैमिशराय, जयप्रकाश कर्दम, श्योराजसिंह बैचेन आदि साहित्यकारों ने इसी भाषा को अपनाया है।

ओमप्रकाश वाल्मीकि की भाषा को निम्न बिंदूओ में विश्लेषित किया जा सकता है।

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि,दलित साहित्य का सौदंर्यशास्त्र (दिल्ली,राधाकृष्ण प्रकाशन:प्रथम संस्करण 2001) पृ. 81

4.1. विभिन्न शब्दों का प्रयोग

विभिन्न क्षेत्रों के एवं समाज के स्तरों के शब्दों का मार्मिक प्रयोग हुआ है। इन कवितासंग्रह में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है।

4.1.1 तत्सम् शब्द

तत्सम् से तात्पर्य - ज्यों का त्यों। 'तत्सम' वे शब्द हैं जो संस्कृत से आए हैं और बिना किसी विकार या परिवर्तन के हिंदी भाषा के अंग बन गए हैं - अर्थात जो अपने मूल रुप में ही प्रयुक्त होते हैं।

वाल्मीकि की रचनाओं में तत्सम शब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे -

"प्रतीक, प्रताडित, धैर्य, आलिगंन, मूक, गंध, रोष, प्रलाप, वटवृक्ष, यज्ञ, गर्भ, नासिका रुध्र, मस्तिष्क, कुटिल, सहिष्णुता, कुकर्म, पाषाण-रुप, आत्मदाह, जिज्ञासा, अमूर्त, पृष्ठों, पारदर्शी, पूर्वाग्रही श्वेत, दुत्कार, श्लोक, मंत्र, कोष्ठक, घृणित, वर्णाश्रम, कुटुम्ब, नेत्र, शास्त्री, उष्णता, दोष, शिलालेख, चीरहरण, लाक्षागृहो, अवाक्, मेरुदण्ड, लोकतंत्र, संवाहक, निरर्थक, संतान, उक्तियाँ, अनुबंध, वीभत्स, अभ्यस्त, पुरातत्व, अतीत, जलाशय, निस्पृह, इन्द्रेश, विद्रूपताएँ, आग्नेय, नैराश्य, वृत्ताकार, साक्षी, दुर्गन्ध, घृणीत, चेतना "[1]

4.1.2 तद्भव शब्द -

तद्भव शब्द वे हैं जो संस्कृत से उत्पन्न हैं अर्थात जिन शब्दों का मूल स्रोत तो संस्कृत है किंतु हिंदी में उनका बदला हुआ दिखाई देता है। कविता की भाषा में सहजता और स्वाभीविकता लाने के लिए तद्भव शब्दों का प्रयोग आवश्यक है। जैसे -

"गाय, दाँत, सुअर, माटी, धरती, उजागर, सखी-सहेली, विश्वास, चौराहा, बियावान, आँख्रे, हवा, सांस, सपने, हाथ, बगीचा, पेड, पत्ते"[2]

4.1.3 देशज शब्द -

देशज का अर्थ ग्रामीण अथवा लोकभाषा के शब्द है। देशज शब्द वे हैं जिनका स्त्रोत अज्ञान रहता है। वाल्मीकिजी ने अपनी कविताओं में देशज शब्दों का प्रयोग जगह-जगह किया है। जैसे -

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 11-103

2. ....वही ...., पृ. 11-103

''झाड-झंखाड़, खांड़, चिथड़ा, तुड़ी-मुड़ी, पोर-पोर, फाँस, कुनमुनाया, रँभया, ढुलक, जोता, बुधरा टटोलती, चमारी, चमार, भंगिन, खसोट, जनेगी, पसर, लेई, गुर्राते, ढोत, टिकुली, चप्पू''[1]

4.1.4 विदेशी शब्द -

विदेशी शब्दों को हम दो भागों में बाँट सकते है। पहला भाग अंग्रेजी शब्दों का और दूसरा भाग उर्दू, फारसी अरबी शब्दों का।

4.1.5 अंग्रजी शब्द -

वाल्मीकिजी द्वारा प्रयुक्त अंग्रजी शब्द इस प्रकार हैं - ''प्राईमरी, प्लास्टर, पेंसिल, स्कूल, पेट्रोल, तारकोल, साइन-बोर्ड, पोस्टर, क्लर्क, फूटबाल, बैग, सायरन, लिपस्टिक, इंटर कॉलेज, डी.एल.रोड, पलटन, फर्नीचर''[2]

4.1.6 उर्दू, अरबी, फारसी शब्द -

''दहशत, हलाक, दहलीज, फासला, तब्दील, खिलाफ, खामोश, जमीन, दायरे, इर्द-गिर्द, लमहा, दस्तावेज, साया, नजरें, लहू-लुहान, लिहाफ, गलीचे, बावजूद, स्याही, निशान, किताब, गुमान वर्दी, मौजूद, अखबार, इबादतगाह, जुल्म, कंगाल, सुकून, हवाले, लाश, साजिश, खतरनाक, बालिश्त, गोलबंद, हक, लायक, जोखिम, खौफनाक, इबारत, जुलूस, शर्त, एतराज, खुलासा, ख्वाब, गमक, खुशबू, रिश्ते, कमजोर, बेखबर, तहशीयत, बेहयायी, शख्सियत, अक्स, सगोशियाँ, गुलाम, तमाम, कवायत, ताज्जुब ''[3]

4.1.7 ध्वन्यात्मक शब्द -

विवेच्य काव्यसंग्रह में भाषा की सहजता प्रदान करने तथा वातावरण की यथार्थ स्थिति को चित्रित करने के लिए ओमप्रकाश वाल्मीकिजी ने ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे -

''फुसफुसाकर, सिसकना, गुनगुनाना, कुनमुनाया, रँभया, खनकना, सरसराहट, सनसनाती,

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 11-103
2. ....वही ...., पृ. 11-103
3. ....वही ...., पृ. 11-103

फडफडाकर, लहराकर, चहचहाना, खिलखिलाते, उमड, घुमडकर, बिलबिलाते। ''[1]

4.1.8 पुनरुक्ति शब्द -

साहित्यिक रचनाओं में भाषागत सौंदर्य की अभिवृद्धि के लिए प्राय: पुनरुक्ति शब्दों का प्रयोग किया जाता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के कवितासंग्रह में प्रयुक्त पुनरुक्ति शब्द भाषा में सहजता, सरलता तथा प्रभावी रोचक बनाने के लिए साहय्यक हुए हैं। जैसे - ''चुपके चुपके, भटकते-भटकते, एक-एक, भिन्न-भिन्न, देखते-देखते, पोर-पोर, इर्द-गिर्द, पटक-पटक, अभी-अभी, धीमे-धीमे, बची-खुची, छोटी-छोटी, भीग-भीग, नस-नस''[2]

4.2 मुहावरें -

भाषा को सजीव और प्रभावशाली बनाने के लिए मुहावरेदार भाषा का प्रयोग किया जाता है। 'निडर' लिखते हैं - ''मुहावरा उन वाक्यांश या खंड खंड वाक्या को कहते हैं जिनका अर्थ उस भाषा में साधारण या सीधा न होकर विलक्षण या वैचित्र्यपूर्ण हो। मुहावरा भाषा का विशिष्ट प्रयोग है जिसे लाक्षणिक प्रयोग कहा जाता है। मुहावरों के प्रयोग से भाषा में कसावट, चमत्कारिकता विलक्षणता आती है। अत: स्वतंत्र रुप से प्रयुक्त नहीं होता। मुहावरें की सार्थकता किसी वाक्य का अंग बन जाने में होती है।''[3] मुहावरें भाषा को प्रभावशाली बनाकर विशिष्ट अर्थ को स्पष्ट करने में सहाय्यक होते हैं।
वाल्मीकि जी द्वारा प्रयुक्त मुहावरें इस प्रकार हैं -

'जीते जी मर जाओगे।'[4]

'जीते जी मर जाना' से तात्पर्य बर्बाद हो जाना, लुट जाना।

''बस्तियों से खदेड़े गये।''[5]

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 11-103
2. ....वही ...., पृ. 11-103
3. अमी आधार निडर,समाचार संकलन एवं अनुवाद,(उत्तरप्रदेश,जवाहर पुस्तकालय:प्रथम संस्करण2004)पृ.4
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 11
5. ....वही ...., पृ. 14

'खदेड देना।' से तात्पर्य है भगा देना, निकाल देना।

''ताकि विपरीत दिशा से आते।''[1]

विपरीत दिशा से आना अर्थात उल्टी ओर से आना, गलत दिशा से आना।

''जमीन पर घूटने टेक दें।''[2]

'घूटने टेकना' यानी अपने आपको समर्पण कर देना या हार जाना, असहाय होना।

4.3 लोकोक्तियाँ -

लोकोक्तियों को कहावते भी कहा जाता है। इसके माध्यम से मार्मिक शब्दों द्वारा व्यक्तियों के गलतियों पर व्यंग्य किया जाता है इसमें जीवन के तथ्य को लेकर सत्य को बडी खूबी से स्पष्ट किया जाता है। नालंदा विशाल शब्दसागर में लोकोक्ति का अर्थ इस प्रकार है - ''वह अलंकार जिसमें कहावत के द्वारा कुछ चमत्कार लाया जाता है''[3] लोकोक्तियाँ कविता के गागर में सागर भरने का कार्य करती है -

''आप हँसे पीठ पीछे या खड़ी कर दें
लोहे पर दीवारें रास्तो पर''[4]

'पीठ पीछे हँसना' यानी निंदा करना या छिपकर मजाक उडाना 'लोहे की दीवार' यानी दृढ संकल्प या अपने आपको अडिग रखना।

''बालू के घरौंदे। किले नहीं होते।''[5]

बालू के घरौंदे या किले से तात्पर्य अर्थहीन कार्य करना या फिर सिर्फ हवा में बात या कार्य करना।

''फुसला देने वाले शब्दों के। मुखौटे पहनकर।''[6]

'मुखौटे पहनना' से तात्पर्य बहुरुपिया या फिर 'छलनेवाला'।

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 66
2. ....वही ...., पृ. 35
3. संपा. नवलजी, नालंदा विशाल शब्दसागर (नई दिल्ली, आदिश बुक डिपो : संस्करण 1988), पृ. 1222
4. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 46
5. ....वही ...., पृ. 65
6. ....वही ...., पृ. 65

4.4.काव्य प्रतीक -

हिंदी में प्रतीक शब्द अंग्रेजी के 'सिम्बल' का पर्याय है। सिम्बल का अर्थ संकेत या चिन्ह है। हिंदी साहित्य में प्रतीक या प्रतीकविधान जैसे शब्दों का प्रयोग आधुनिक युग में ही हुआ। प्राचीन साहित्य तथ मध्ययुगीन साहित्य में प्रतीकों की अपेक्षा अलंकारों, छंदो, तथा अन्योक्ति पद्धति को अधिक महत्व दिया गया था। आधुनिक युग के साहित्य में प्रतीकों का महत्व है। आधुनिक हिंदी में छायावादी दौर से प्रतीकों का महत्व बढ़ा। प्रतिकों के माध्यम से अपने समय और स्थितियों की अनेक व्याख्याओं को खोला जाता है। कवि अपनी सृजनात्मक, प्रतिभा और कल्पनाशीलता के आधार पर प्रतीकों का प्रयोग करता है। प्रतिकों का प्रयोग मूलत: पाश्चात्य साहित्य मे विपुल मात्रा में हुआ। उसी के अनुकरण पर हिंदी और भारतीय साहित्य में प्रतिकों का प्रयोग होने लगा। टी. एस इलियट, विल्यम किट्स, एडगर, एलन पो आदि के काव्य सृजन तथा वैचारिकता ने प्रतीकवाद को जन्म दिया। आज प्रतीक शब्द का प्रयोग हर क्षेत्र में किया जाता है। कला और विज्ञान इन दोनों शाखाओं में प्रतीक शब्द का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।

काव्य प्रतीक अपने मूल में ही बिम्ब ही होता है अर्थात कोई भी बिम्ब जब बार-बार कविता में दुहराया जाए तब वह रुढ होकर प्रतीक बन जाता है। इसलिए प्रतीक, बिम्ब की अपेक्षा एक सीमित एवं सार्थक अर्थ देता है। अर्थात कविता में प्रतीक बार-बार प्रयुक्त होकर अपना अर्थ निश्चित कर लेते हैं। प्रतीक के सम्बध में डॉ नगेंद्र जी कहते हैं - ''प्रतीक एक प्रकार का अचल बिम्ब है जिसके आयाम सिमटकर अपने भीतर बंद हो जाते हैं।''[1] साहित्य में प्रतीक की महत्ता सर्वविदित है प्रतीकों के द्वारा भावना, विचार, बोध आदि की सरल एवं प्रभावशाली अभिव्यक्ति होती है। प्रतिकों के माध्यम से किसी बात को संक्षेप में कहा जा सकता है।

प्रतिकों का प्रयोग करते समय कवि देखता है कि जटिल अनुभूतियों को किन प्रतिकों के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाए। ओमप्रकाश वाल्मीकिजी ने प्रस्तुत कवितासंग्रह में नये-नये प्रतिकों का प्रयोग किया है जो दलितों की पीड़ा, वेदना और शोषण से उपजे आक्रोश को, सामाजिक यथार्थ को चित्रित करते हैं। कवि ने संपूर्ण कवितासंग्रह में यथार्थवादी प्रतीकों का प्रयोग किया है। कविताओं में पेड़,

---

1. डॉ नगेंद्र, काव्यबिंम्ब (नई दिल्ली, नेशनल पब्लिकेशन हाऊस : प्रथम संस्करण 1967), पृ. 90

भेडिए, जंगली सुअर, कुत्ते शोषण और गुलामी के प्रतीक हैं जो समाज में व्याप्त घोर अमानवीयता को रेखांकित करते हैं। कवि ने ऐसे प्रतिकों को गढ़ा है जो समाज के ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक प्रकृति को सहज और सरल रुप में चित्रित करते हैं।

प्रस्तुत कविता संग्रह में ओमप्रकाश वाल्मीकिजी दलितों की स्थिति का उनकी अहमियत का तथा उनके मूल्यों का यथार्थपरक चित्रण करते हैं। हमारे समाज में दलित वर्ग की स्थिति क्या है ? उनके कुछ बिम्ब प्रतीक इन पंक्तियों में उभरते हैं -

> ''पैदा हुए, वैसे ही
> जैसे होते हैं पैदा
> गालियों में कुत्ते बिल्ली
> पैदा हुए वैसे ही
> जैसे होती है खेत में पैदा
> खत-पतवार
> हरी दूब झाड झंखाड
> पैदा हुए, वैसे ही
> जैसे खांड बनाने की प्रकिया से
> पैदा होता है शीरा
> पेट्रोल से तार कोल
> ..... अंधेरे में वैसे ही
> जैसे पैदा हुए
> गुमनाम
> उत्पोत्पाद की तरह''[1]

दलित समाज में 'आत्म' के लिए संघर्षरत है। दलितों की स्थिति ऐसी है कि यदि कुत्ता छू जाये तो ठीक है परंतु दलितों के स्पर्श से यज्ञ, स्नान किये बिना शुद्धि संभव नहीं होती। कवि ने 'कुत्ते' को दलित के प्रतीक रुप में स्पष्ट किया है।

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 18-19

'पेड़' कविता में कवि ने 'पेड़' को प्रतीक के रुप में दर्शाया है। सर्वण समाज तभी तक सवर्ण है जब तक ये हरे पत्ते हैं, लेकिन इन सबके समाप्त होते ही ये सवर्ण पेड़ नही ठूँठ कहलायेंगे जो जीते जी मारे जायेंगे। कवि कहते हैं -

''पेड़
तुम उसी वक्त तक पेड़ हो,
जब तक ये पत्ते
तुम्हारे साथ हैं
पत्ते झरते ही
पेड़ नहीं ठूँठ कहलाओगे
जीते जी मर जाओगे !''[1]

वाल्मीकिजी ने 'पंडित का चेहरा' कविता में पंडित का चेहरा जैसे प्रतीक का प्रयोग किया है जो शोषण और दमण का प्रतीक है -

''बार-बार दोहराने पर भी
याद नहीं आता
गाँव के उस पण्डित का चेहरा,
जब कि मैं सब कुछ
याद कर लेना चाहता हूँ,
जो कुछ भी लिखा था सब कुछ
तो क्यों डाँटकर भगा दिया था,
मेरी माँ को पण्डित ने।
उस वक्त जब वह पूछने गयी थी,
मेरा भविष्य।''[2]

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 11
2. ....वही ...., पृ. 32

पंण्डित का चेहरा ये प्रतीक दलितों को उसकी शिक्षा जैसी सुविधा से वंचित करता है, जो शोषण एवं दमन का प्रतीक है।

वाल्मीकिजी ने नये प्रतीकों का भी प्रयोग किया है। भेड़िए शब्द को गुलामी एवं शोषण के प्रतीक रुप में व्यक्त किया है -

> ''पाला है भूखे बच्चों को
> बहला-फुसला कर
> इस इन्तजार में
> कि एक रोज बीत जायेंगे
> ये संताप भरे दिन
> टूटकर बिखर जायेंगे
> आदिम भेड़ियों के दाँत''[1]

कवि ने समाज में व्याप्त शोषकों की शोषण की तीव्रता को आदम भेडियों के रुप में व्यक्त किया है। कवि आशावादी हैं कि आनेवाले दिनों में दलितों का शोषण कम होगा।

वाल्मीकिजी ने तितली को प्रतीक के रुप मे प्रस्तुत किया है -

> ''वे चाहते हैं
> शब्द बन जाये तितली
> शब्द जानता है
> तितली बन जाने के बाद
> क्या होगा ?'' [2]

सवर्ण दलितों के शब्दों से घबराता है जो शब्द प्रतिशोध, विद्रोह करने के लिए तैयार है। यहाँ सवर्ण चाहता है कि शब्द तितली बन जाए जो आये फिर गायब हो जाये अर्थात शब्द जानता है कि वह अगर तितली बन जाये तो उसका कोई अर्थ नहीं रहेगा। परंतु सवर्ण समाज शब्द को ही तितली बनाने पर तुला हुआ है।

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 20
2. ....वही ...., पृ. 93-94

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.

कवि ने दलितों को पोस्टर के प्रतीक के रुप में चित्रित किया है -

"कल जब कोई तेज अन्धड़
बिखेर देगा मुझे जमीन पर
चिथड़े-चिथड़े करके
तब भीड़ में से
किसी एक को पकडकर
फिर चिपका दिया जाएगा
मेरी जगह
पोस्टर की शक्ल में।" [1]

आमतौर पर पोस्टर बनाते समय आकर्षक शब्दों का प्रयोग करते हैं। सभी लोग पोस्टर को देखकर बहस करते हैं, पोस्टर की भाषाशैली को देखकर संतुष्ट हो जाते हैं। उसकी भाषा के पीछे छिपी वेदना, पीडा को समझने का प्रयास नहीं करते। कवि कहते हैं कि तेज चलती हवा के कारण पोस्टर चिथडों से गंधा हो जाता है तो उसी भीड का कोई एक व्यक्ति समाज व्यवस्था का पोस्टर बन जाता है।

वाल्मीकिजी ने प्राकृतिक प्रतिको का प्रयोग किया है। एक दलित लड़की को कबूतर के प्रतीक के रुप में व्यक्त किया है -

"कबुतर की तरह बैठी लड़की
सपनों भरी आँखों में
बुनती है दहशत" [2]

कवि ने लड़की को एक कबुतर के प्रतीक रुप में व्यक्त किया है। जिस प्रकार कबुतर डरा हुआ सा रहता है कि कोई शिकारी उसके सपनों को तोड न दे या उसकी आशाओं को नष्ट न कर दे। उसी प्रकार दलित लडकी अपना जीवन डर, चिंता, दहशत में बीता रही हैं कि कोई सवर्ण उसके इन सपनों को मिटा न दे, तोड न दे।

वाल्मीकि जी की वाणी में कटुता है उनके हर एक शब्द में वो ताकत है जो संघर्ष और प्रतिशोध

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 69
2. ....वही ...., पृ. 25

करने में समर्थ है। दलित समाज ने हजारों सालों से शिकस्त देखी है। वाल्मीकिजी के प्रतिकों को महसूस किया जा सकता है। वाल्मीकिजी की कविता मुक्ति संघर्ष को ध्वनित करती है। वाल्मीकि जी ने पांरपारिक प्रतीकों की जगह मौलिक एवं नए प्रतीकों का सफल प्रयोग किया है।

4.5. काव्य -बिम्ब -

भाषा के अतिरिक्त कुछ ऐसे सौंदर्यशास्त्रीय तत्व होते हैं, जो संसार के सभी साहित्य में समान रुप से पाये जाते हैं। ऐसे ही तत्वों में बिम्ब, प्रतीक रुपक आते हैं। बिम्ब यदि कविता की मूल गुणधर्मिता नहीं तो कम-से-कम कविता के लिए एक अत्यंत आवश्यक तत्व जरुर हैं क्योंकि भावुकता की प्रतिष्ठा करनेवाले मूल आधार या उपादन प्रत्यक्ष रुप ही हैं। इन उपादानों में काव्य बिम्बों का स्थान सुरक्षित होने के साथ-साथ आवश्यक भी है। वस्तुत: काव्य का उद्‌देश्य है अनुभूति का संप्रेषण अर्थात कवि की अनुभूति को इस प्रकार संप्रेषित करना कि सहृदय के मन में उसी प्रकार के भाव जागृत कर सके। बिम्ब का सामान्य अर्थ प्रतिबिम्ब, छायाप्रतिभूति, आभास, झलक होता है। काव्य में भावों विचारों के मूर्तिकरण की प्रक्रिया सबल सटीक बिम्ब योजना से ही पूर्ण हुआ करती है।

काव्य और बिम्ब में मूल अंतर यह है कि बिम्ब दृश्य की प्रतिकृति होते हैं। डॉ नगेद्रजी ने अपनी पुस्तक 'काव्य-बिम्ब' में बिंब के पाँच प्रकार बताये हैं -

1. दृश्य, श्रव्य, स्पृश्य, घ्रातव्य और रस्य
2. लक्षित और उपलक्षित
3. सरल और सश्लिष्ट
4. खंण्डित और समकलित
5. वस्तुपरक और स्वछन्द

वाल्मीकिजी के कविता संग्रह 'बस्स! बहुत हो चुका' में अनेक प्रकार के बिम्ब का प्रयोग हुआ है। यह दलित जीवन की त्रासदी और उसके यथार्थ रुप को प्रकट करते हैं। वस्तुत: दलित साहित्य में न शिल्प की जागरुकता है न ही वह उसे जरुरी मानते हैं। वह अपने आप साहित्य में आ जाता है। दलित साहित्य जिस वस्तुचेतना या जिस दृष्टि को लेकर चल रहा है उसमें शिल्प कोई मायने नहीं रखता वह अपने आप आता जाता है। दलित साहित्य में अभिव्यक्त विचार एवं भाव सीधे मन पर चोट करते हैं। वाल्मीकिजी की कविता में अँधेरा, गंदगी भरा परिवेश, सीलन भरे मकान में सिसकती जिंदगी और

जीवन का यथार्थ है जो वाल्मीकिजी के जीवन का अविभाज्य घटक बने हैं। इन वस्तुओं को दृश्य-बिम्ब के स्थान पर रखकर कवि उनमें अपने प्रतिबिम्ब ढूँढने का प्रयास करते हैं। वाल्मीकि जी ने यथार्थ से जुडे काव्य-बिम्बों का प्रयोग किया है।

कवि वर्षों से यातना भोग रहे लोगों को देखकर दु:खी हो जाते हैं। इसमें झाडू, बाल्टी-कनस्तर प्रतीक रुप में आये हैं।

''जब भी देखता हूँ मैं
झाडू या गंदगी से भरी बाल्टी कनस्तर
किसी हाथ में मेरी रगो में
दहकने लगते हैं
यातनाओं के कई हजार वर्ष एकसाथ
आँखो में उतर आते हैं
इतिहास का स्याहपन
अपनी आत्मघाती कुटिलताओं के साथ ....
असंख्य मूक पीडाएँ
कसमसा रही हैं
मुखर होने के लिए रोष से भरी हुई''[1]

इन पंक्तियों में झाडू थामे हाथ, गंदगी, बाल्टी-कनस्तर ये दलित जीवन के यथार्थ को अभिव्यक्त करते हैं जो दलित संदर्भो से जुडे हैं। कवि ने यथार्थवादी बिम्बों का प्रयोग किया है, जिसमें विद्रोह है।

वाल्मीकिजी की कविताओं में राजनीतिक बिम्बों को भी देखा जा सकता है इन कविताओं में बिम्ब की सशक्त अभिव्यक्ति दलित कविता को नया आयाम देती है -

''उनकी बारीक मुस्कुराहटें
संत बैरागी सा चोला
उन्हें जरामय पेशा घोषित नहीं करता

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 79

स्वच्छ श्वेत परिधानों पर
गुनाहों का लाल चोला
दिखाई नहीं पडता
कुछ आँखे देख रही हैं
खामोशी के साथ
अधेरी की गहरी परतों में खतरनाक साजिश
जो कडवे धुएँ हा चक्रव्यूह बनाकर
फँसा रही असंख्य अभिमन्यु।''[1]

करोंडों दलित आज भी गुलामी में जीवन बीता रहे हैं। वाल्मीकिजी के विद्रोह शब्दबद्ध बिम्ब आजादी के लिए है। यह बिम्ब कविता में आक्रोश को अभिव्यक्त करते हैं -

''चक्रव्यूह में फँसे अभिमन्यु को
देखता रह गया''[2]

वाल्मीकिजी की कविता में आक्रोश और विद्रोह को अभिव्यक्त किया गया है -

''गहरी पथरीली नदी में
असंख्य मूक पीडाएँ
कसमसा रही हैं।''[3]

इसका और एक उदाहरण दृष्टव्य है -

''ओ मेरे अज्ञात, अनाम पुरखो
तुम्हारे मूक शब्द
जल रहे हैं
दहकती राख की तरह''[4]

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 60
2. ....वही ...., पृ. 61
3. ....वही ...., पृ. 80
4. ....वही ...., पृ. 15

कवि ने बिम्ब के प्रयोग द्वारा दलित समाज के आक्रोश एवं विद्रोह को मूक शब्दों में प्रस्तुत किय हैं। तात्पर्य यह है कि दलितो में जो विद्रोह या आक्रोश की भावना है वह मूक हैं।

वाल्मीकिजी ने बिम्ब के प्रयोग के माध्यम से यह निरुपित करना चाहा है कि दलित समाज हमेशा निराशा, अपमान, घुटन, अभाव एवं घृणा में जीवन जी रहा है। वह इस अंधेरेपूर्ण जीवन से संघर्ष करने का प्रयास करता है। कवि का कहना है कि दलित हमेशा मृत्यु और जीवन से संघर्ष करता है। जैसे -

"उसने सख्त, खुरदती धरती को छूकर देखा
जो कराह रही थी"[1]

कवि ने कई जगह कुशलता से बिम्ब का प्रयोग किया है जो दलितों में आत्मविश्वास पैदा करते हैं -

"हवा की सरसराहट
गुजरती है पास से
धारधार चाकू की तरह"[2]

वस्तुत: जब कविता मानवीय धरातल से जुडती है तो कविता में व्यक्त भाव पाठक को महसूस होते हैं। जब कविता दु:खी, शोषित एवं पीड़ितों की अभिव्यक्ति बनती है तब वह कविता भाव के स्तर पर सार्थकता प्राप्त करती है।

"कवि की चुप्पी
बहुत सर्द होती है"[3]

कविता के भाव चौकीदार की सीटी की तरह है जो चूप होते हुए भी काफी कुछ बोल जाती है। कवि ने समानता की बात कहते हुए दलितों के संतप्त भाव को रेखांकित किया है -

"फैला हुआ है
चारों ओर साँवला धुआँ"[4]

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 15
2. ....वही ...., पृ. 40-41
3. ....वही ...., पृ. 73
4. ....वही ...., पृ. 88

हमारे यहाँ की लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था दलितों के उत्थान विरोधी है। वह समनता नहीं चाहती। कवि ने बिम्ब के द्वारा चारों ओर फैले निराशा, असमानता, बेबसी के धुएँ को चित्रित किया है।

इस प्रकार वाल्मीकिजी अपने कवितासंग्रह में बिम्ब के प्रयोग द्वारा दलितो की समस्याओं को प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं। साथ ही बिम्ब के द्वारा दलितो की स्थितियों का यथार्थ चित्रण किया है। दलितों की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति का भी सफल चित्रण किया है। वाल्मीकिजी की खासियत रही है कि कविता में प्रयुक्त बिम्ब उनके आवेगपूर्ण अनुभव की अभिव्यक्ति हैं।

4.6 मिथकों का प्रयोग -

शंबुक, एकलव्य, कर्ण और राम को नये ढंग के मिथक के रुप में प्रयुक्त किया है और पुराने मिथकों का छोड दिया है, नये मिथक प्रतीक बन गये हैं। उनके मिथकों मे यथार्थवादी शैली दिखाई देती है यहाँ राम सवर्ण सत्ता का प्रतीक है कर्ण दलितों का प्रतीक है। प्रारंभ होती है बात यथार्थवादी शिल्प से और कर्ण पूर्ण रुप से दलित समाज का प्रतिनिधि बन जाता है। कर्ण ने वर्ण व्यवस्था पर प्रहार किया है। प्रतिकात्मक शैली में कवि कहते है -

''नहीं मारा जाएगा तपस्वी शंबुक
नही कटेगा अंगूठा एकलव्य का
कर्ण होगा नायक
राम सत्ता लोलुप हत्यारा''[1]

वाल्मीकिजी ने मिथकों का प्रयोग अपने कविताओं में किया है। वाल्मीकिजी ने पुराणे मिथकों को नये ढंग से प्रस्तुत किया है। जो एक सफल एवं सशक्त कवि ही कर सकता है।

4.7. शब्दशक्ति -

शब्दशक्ति के तीन मुख्य भेद स्वीकार किये हैं -

क. अभिधा शब्द-शक्ति

ख. लक्षणा शब्द-शक्ति

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 103

ग. व्यंजना शब्द-शक्ति

4.7.1 अभिधा शब्द-शक्ति -

शब्द शक्ति की पहली शक्ति साक्षात संकेतित अर्थ जिसे मुख्य अर्थ कहा जाता है। उसका बोध करानेवाले व्यापार को अभिधा शक्ति कहते हैं। अभिधा शक्ति के माध्यम से शब्द ज्ञान के साथ मुख्य अर्थ का ज्ञान भी हो जाता है इस शक्ति के माध्यम से तीन प्रकार के शब्दों का अर्थ बोध होता है। रुढ़, यौगिक और यौगिक रुढ़। वाल्मीकिजी ने अभिधा शब्द-शक्ति का सुंदर प्रयोग किया है।

अभिधा शब्द शक्ति के उदा निम्न हैं -

'वह मैं हूँ' कविता में -

> ''पेड़ो में नदी का जल
>
> धूप हवा में श्रमिक शोषित गंध
>
> बाढ़ में बह गयी झोपडी का दर्द
>
> सुखे में दरकती धरती का बाँझपन''[1]

प्रस्तुत पंक्तियों में वाल्मीकिजी ने सहज सरल शब्दों में दलितों जीवन चित्रित किया है। पेडों में नदी का जल दिखाई देता है। दलितों के श्रम से हवा की गंध भी शोषित लगती है। उसी तरह बाढ की प्रकोप से जिस तरीके से झोपडी बह जाती है और सुखे में भी धरती का बाँझपन दिखाई देता है।

'हवा धूप और धरती' कविता में -

> ''जहाँ कुछ नहीं होता
>
> वहाँ हवा होती है
>
> खालीपन भर देने के लिए'' [2]

प्रस्तुत पंक्तियों में हवा, खालीपन आदि के माध्यम से सामान्य अर्थ प्रकट होता है। जहाँ कुछ नही होता वह खालीपन भरने के लिए हवा होती है। यहाँ पर अभिधा शब्दशक्ति है।

'मिट्टी के कच्चे घर' कविता में -

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 17

2. ....वही ...., पृ. 41

''मिट्टी के कच्चे घर

होते हैं पारदर्शी

जान लेते हैं आस-पडोस का सुख-दुख

आसानी से''[1]

प्रस्तुत पंक्तियों में सामान्य अर्थ ही प्रतित होता है। मिट्टी के कच्चे घर पारदर्शी होते है। इसलिए वह आस-पास के हलचल को आसानी से जान लेते है। अत: यहा अभिधा शक्ति है।

4.7.2 लक्षणा शब्द-शक्ति -

किसी शब्द से प्रचलित अर्थ के ग्रहण करने में बाधा होने पर उससे संबंध अन्य अर्थ को प्रदान करनेवाली शक्ति को लक्षणा शब्द-शक्ति कहते हैं। वाल्मीकिजी की कविताओं में शब्दशक्ति का प्रयोग निम्न प्रकार से है -

'भय' कविता में -

''प्रेम की आसक्ति पर नहीं

तुम्हारे खूनी पंजो से डरकर''[2]

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रेम और खूनी पंजा दोनों का अर्थ अलग है। परंतु यहाँ दुसरा अर्थ है - डरकर या दबाव मे आकर इस प्रकार लिया है।

'आदिम रुप' कविता में -

''शब्द! तुम्हें कसम है

एक न एक दिन तुम

उतरोगे पृथ्वी पर

धूप बनकर''[3]

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने शब्द और धूप का अर्थ इस प्रकार लिया है - कि दलित एक दिन पढ-लिखकर संघर्ष करने के लिए बलवान बनेंगे।

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 23
2. ....वही ...., पृ. 90
3. ....वही ...., पृ. 29

'वह मैं हूँ' कविता में

> ''खेत में माटी में
> उगते अन्न की खुशबू मैं हूँ''[1]

प्रस्तुत पंक्तियों में उगते अन्न की खुशबू में दलितों का अध्यवसान है। खुशबू को दलितों का अर्थ देने से मुख्यार्थ का पुर्ण त्याग है। अत: यहाँ वाल्मीकिजी ने लक्षणा का सुंदर प्रयोग किया है।

'शायद आप जानते हो' कविता में

> ''चूहड़े या डोम की आत्मा।
> ब्रह्म का अंश क्यों नहीं है''[2]

प्रस्तुत पंक्तियों में ' चुहडें या डोम' का अर्थ भंगी महत्तर समाज है। यह दोनो शब्द एक जातिविशेष है परंतु वाल्मीकिजी ने दोनों शब्दों का प्रयोग समस्त दलित, शोषित, पीडितों के लिए किया है।

इस प्रकार वाल्मीकिजी की कविताओं में शब्दशक्ति का प्रचूर मात्रा में प्रयोग हुआ है। वाल्मीकिजी की

भाषा गदयात्मक होने के साथ उसमें विद्रोह का स्वर है। दलित जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है। वाल्मीकिजी की भाषा में वेदना आक्रोश, प्रतिशोध, विद्रोह के साथ-साथ वैचारिक प्रतिबद्धता है।

निष्कर्ष -

दलित साहित्य के स्वरुप, उसकी प्रतिबध्दता, उसके सरोकार और सौंदर्यशास्त्रीय विवेचन से उसकी साहित्यिकता स्पष्ट हो जाती है। दलित साहित्य की भाषा वेदना और विद्रोह की भाषा है। दलित साहित्यकारों ने वेदना, विद्रोह, और आक्रोश के साथ-साथ मुक्ति और परिवर्तन की चेतना को भी अपनी रचनात्मक भाषा में उतारा है जिसमें वैचारिक प्रतिबध्दता है बदलाव की चेतना है।

बस्स! बहुत हो चुका काव्यसंग्रह में व्याप्त शिल्प की सहज अभिव्यक्ति हुई है। वाल्मीकिजी ने परम्परावादी काव्यभाषा प्रतीक, बिम्ब को अपनाया है। मिथकों को वर्तमान संदर्भ से जोडकर प्रस्तुत किया है। आक्रमक एवं विद्रोहात्मक भाषा एवं शोषण से ओत-प्रोत बिम्ब का प्रयोग किया है।

---

1. ओमप्रकाश वाल्मीकि, बस्स! बहुत हो चुका (नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन प्रथम संस्करण 1997), पृ. 16
2. ....वही ...., पृ. 40

वाल्मीकिजी की कविताओं में अभिधा और लक्षणा शब्दशक्ति का भी प्रयोग हुआ है।

कोई भी कवि अपनी भाषा के कारण ही पहचान जाता है। कवि की भाषा सहृदय के मन को किस प्रकार प्रभावित करती है इसमें कवि का सामर्थ्य होता है। वाल्मीकि जी ने दलितों की वेदना, शोषण, अन्याय एवं अत्याचार को यथार्थपरक भाषा के माध्यम से प्रस्तुत किया है वाल्मीकिजी की कविताओं में विद्रोह की आग है, उनकी सशक्त अभिव्यक्ति ही दलितों में चेतना पैदा करती है। भाषा की दृष्टि से ओमप्रकाश वाल्मीकिजी की कविता समकालीन हिंदी कविता की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। उनकी भाषा संवेदनात्मक आक्रमक एवं विद्रोहात्मक है जो दलितों में चेतना उत्पन्न करने में समर्थ एवं सफल हुई है।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.